IJAER/July-August 2024/Volume-13/Issue-4 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) Impact Factor:7.06

'सीन:75 ' और 'दिल एक सादा काग़ज़' में चित्रित भारतीय फिल्मी दुनिया का यथार्थ

डॉ.रवीन्द्र कुमार मीना
सहायक आचार्य, हिंदी
राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
सवाई माधोपुर, राजस्थान

आधुनिक भारतीय जन-जीवन पर फिल्मों का बहुत गहरा प्रभाव रहा है। सिनेमा के अभिनेता-अभिनेत्रियों की वेशभूषा, हेयर स्टाइल, एक्शन आदि का युवा पीढी पर सीधा असर होता है। फिल्मों को लोकप्रिय होने और धनवान बनने का अच्छा माध्यम माना जाने लगा है। लेकिन फिल्मी समाज में लोग मानवीय मूल्यों को दरकिनार कर स्वार्थसिद्धिपूर्ण, बनावटी व्यवहार करते हैं। फिल्मी दुनिया ऊपर से जितनी रूपहली नज़र आती हैं अपने अंदर मे उतनी ही विकृतिपूर्ण एवं काली है।

फिल्मी दुनिया की चकाचौंध से आकर्षित होकर अपने सपनों की दुनिया साकार करने फिल्म जगत् में प्रवेश करते हैं लेकिन ज्यादातर के सपने चकाचौंध के पीछे के अंधकार में चकनाचूर हो जाते हैं। हिंदुस्तान के कई प्रसिद्ध साहित्यकार साहित्य के साथ-साथ भारतीय फिल्मों में भी पटकथा, संवाद लेखक एवं गीतकार के रूप में सफल रहे हैं। डॉ.राही मासूम रज़ा ऐसे ही एक प्रसिद्ध साहित्यकार और फिल्म लेखक रहे है जिन्होंने साहित्य के साथ-साथ फिल्मों के लिए भी सफल लेखन किया। उन्होंने फिल्मी गाने भी लिखे, परंतु वे एक सफल पटकथा एवं संवाद लेखक के रूप में मशहूर हुए। उन्होंने न केवल तीनसौ से अधिक फिल्मों के संवाद एवं पटकथा लिखीं वरन 'नीम का पेड़' एवं 'महाभारत' जैसे प्रसिद्ध धारावाहिकों के पटकथा एवं संवाद लेखक के रूप में भी ख्याति प्राप्त की।

फिल्मों के लेखक के साथ-साथ डॉ. राही मासूम रज़ा हिंदी भाषा के प्रसिद्ध कथाकार भी रहे हैं। उन्होंने जीवनी, कहानी, निबंध, लेख के अलावा नौ उपन्यासों का लेखन किया। आधा गाँव, हिम्मत जौनपुरी, दिल एक सादा काग़ज़, असंतोष के दिन, नीम का पेड़ आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं। उनके ज्यादातर उपन्यास फिल्मों के लेखन के साथ-साथ ही लिखे गए हैं। जिनमें युगीन जन-जीवन एवं परिवेश का यथार्थ चित्रण किया है। डॉ. राही ने फिल्मों में काम करते हुए सिनेमा की स्वप्निल जगमगाती दुनिया को बहुत करीब से देखा, उसका वास्तविक अनुभव किया। उन्होंने अपने इन्हीं यथार्थ अनुभवों का मार्मिक चित्रण हिम्मत जौनपुरी(1969ई.), दिल एक सादा काग़ज़ (1973ई.)और सीन:75 (1977ई.)उपन्यासों में किया है। "उन्होंने फिल्मी दुनिया की असलियत को अपनी आँखों से देखा, समझा। उनका उपन्यास 'सीनः 75' उनके इन्हीं अनुभवों का साक्षी है। उन्होंने अपने दूसरे उपन्यास 'दिल एक सादा कागज' में भी फिल्मी दुनिया के यथार्थ का प्रभावशाली वर्णन किया है। आकर्षण और चमक-दमक से युक्त फिल्मी दुनिया शेष दुनिया के समाज से किस तरह अलग है? इस समाज से जुड़े लोगों के संबंध कैसे है? उनके जीवनमूल्य क्या है? इन सभी बातों को उक्त दोनों उपन्यासों को पढ़कर जाना जा सकता है।"[1]

'हिम्मत जौनपुरी' उपन्यास का नायक 'हिम्मत' उन हजारों नवयुवकों का प्रतीक है जो फिल्मों की चकाचौंध से आकर्षित होकर मुंबई आते हैं, लेकिन वहाँ की यांत्रिक स्वार्थी मनुष्यता का शिकार होकर न केवल अपना जीवन को बरबाद कर लेते हैं, बल्कि उसे समाप्त करने को मज़बूर भी हो जाते हैं। 'दिल एक सादा कागज' एक तरह से लेखक की आत्मकथा है। इस उपन्यास में उनके जीवन की देशव्यापी तत्युगीन विविध कहानियों के साथ-साथ मुंबई के फिल्म जगत् के यथार्थ की अंतरंग तस्वीरें भी चित्रित की गई हैं।

'सीन :75' उपन्यास फिल्म जगत की वास्तविकताओं का पर्दाफाश करते हुए पाठकों के समक्ष फिल्मी दुनिया की जगमगाहट के पीछे छिपी अनैतिकता एवं स्वार्थों की कालिमा को उजागर करता है। इस उपन्यास के विषय में डॉ. कुँवरपालसिंह लिखते हैं-" राही ने इस उपन्यास में बंबई के महानगरीय, विशेषकर फिल्मी जीवन को विविध कोणों से देखने का प्रयास किया है। हमारी फिल्मी दुनिया अपसंस्कृति और पूँजीवादी संस्कृति की विकृतियों का प्रतिनिधित्व करती है। राही इस उपन्यास में संकेत करते हैं कि यह पतनशील संस्कृति समाज को कहाँ ले जाएगी ?"[2]

क्या अपने आदर्शों-उसूलों के साथ कोई लेखक फिल्म जगत् में स्थापित हो पाता है ? भारतीय जन-जीवन से फिल्मों का कितना सम्बन्ध हैं ? फिल्मी नायक-नायिकाओं व अन्य कलाकार, जो समाज को सत्य की जीत होते दिखाने वाले फिल्मी परदे के पीछे कितने मानवीय, ईमानदार, सदाचारी और मूल्य रक्षक हैं ? आदि ऐसे प्रश्न हैं जिनके राही जी के इन उपन्यासों में कलात्मक एवं प्रामाणिक उत्तर मिलते हैं। अश्लील, द्विभाषी संवादों-गीतों और रेप, न्यूड सीन वाली कहानी को फिल्म उद्योग में पहले जगह मिलती है, बजाय सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों की पोषक कहानी के । अपने उसूलों के पक्के व्यक्ति के लिए यहाँ जगह नहीं है। फिल्म इंडस्ट्री में लेखक के स्थान के बारे में राही जी ने एक लेख में लिखा था- "हिन्दुस्तानी फिल्म की दुनिया में लेखक तीसरे या चौथे दर्जे का नागरिक है। फिल्मी दुनिया का फॉर्मूला यह है कि लेखक के सिवा बाकी तमाम लोग लिखना जानते हैं। हर आदमी की जेब में एकाध कहानियाँ पड़ी होती है।"[3]

'दिल एक सादा काग़ज़ ' में राही जी ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि रफ्फन जब बम्बई गया तो उसे लेखक के रूप में स्थापित होने के लिए कड़ी मेहनत-मशक्कत करनी पड़ी, परन्तु अंततः अपने उसूलों से समझौता करने के बाद ही वह नामी लेखक के रूप में स्थापित हो पाया। इसके अलावा लेखक ने 'सीन :75' में लेखक ने उस स्थिति की ओर भी संकेत किया है कि लोग दूसरे की रचनाओं को खुद के नाम से बेचने और लेखक को गीतकार और गीतकार को लेखक बनने की भ्रमपूर्ण सलाह भी देते हैं- "कथाकारों ने कहा-अरे भई, किस चक्कर में पड़ गए तुम। गाने लिखो गाने! कहानी तुम्हारे बस का रोग नहीं है। गाना लिखने वाले कहानी लिखने की राय दे रहे थे। और कहानी लिखने वाले गाना लिखने की।"[4]

यहाँ तो फंदा पटायालवी जैसे लोग नये लेखकों-गीतकारों को हथियाकर अपना नाम और दाम कमाते हैं। इस सम्बन्ध फिल्मी लेखक अली अमजद के बारे में 'सीनः:75' में राही जी लिखते हैं- "अब तो उसे बिना सोचे लिखने की प्रक्टिस हो गयी। सीन लिखना बायें हाथ का खेल हो गया है। पहले सोच के लिखा करता था।
डारेक्टर, हीरो, हीरोइन, धाक करेक्टर, आरटिस्ट सभी उन सीनों में कीड़े निकालने बैठ जाया करते थे, क्योंकि फिल्मी दुनिया में लेखक के सिवा सभी लोग लेखक होते हैं। दिलीप कुमार से लेकर राजकुमार तक सबको लिखने का बड़ा शौक है।"[5]

लेखक को वहाँ मुंशी कहा जाता है। क्योंकि वह दूसरों के इशारों पर कहानी लिखता है। या अन्य लोग कहानी लिख लेते हैं। जैसे- "बम्बई में प्रोड्यूसर की बीवी से अच्छी कहानी कोई नहीं लिखता। रहा स्क्रीन प्ले, तो हिन्दी फिल्मों में उसकी जरूरत नहीं पड़ती। अब बचा डायलॉग। हीरो खुद लिख लेता है। बचे-खुचे डायलॉग वह असिस्टेंट डाइरेक्टर ठोक देता है जो हीरो या राइटर बनने बम्बई आया था। वहाँ थोडे दिनों पहले तक लेखक मुंशी कहा जाता था।"[6] इस संबंध में 'दिल एक सादा काग़ज़' उपन्यास के पात्र बागी आजमी से उसके दोस्त कहते हैं- "यहाँ कहानियाँ लिखना जानता ही कौन हैं! यहाँ तो सबसे बड़ा राइटर वह है जो चेज़ की कहानियाँ पार कर सके। जो हिन्दी कहानियों का चोला बदल सके।"[7]

फिल्म निर्माता-निर्देशकों के हाथ खुद को और अपनी कला को बेच देने वाले लेखकों और फिल्मों को व्यवसाय मानने वाले निर्माताओं, जो फूहड़ मनोरंजन और सामाजिक मूल्यों से रहित फिल्मों का निर्माण करते हैं, पर व्यंग्य करते हुए राही जी ने सीन :75 में लिखा है- "फिल्म माध्यम का कैसा पब्लिक बलात्कार हो रहा है। हिन्दुस्तान एक जाहिल मुल्क है। जाहिलों के लिए फिल्म से ज्यादा पापुलर कोई माध्यम हो नहीं सकता। कृष्ण चंदर, बेदी, ईस्मत आपा ने तो लेखकों की नाक कटवा दी। लानत है शैलेन्द्र, मजरूह और साहिर पर ...लाल-लाल गाल... वाह! क्या शायरी है। यह लोग बिक गये काले पैसे के हाथ। अपने व्यक्तित्व और अपना आदर्श खो दिया इन लोगों ने।"[8]

फिल्म जगत् आधे-अधूरे लोगों की दुनिया है। इस समाज के लोग दोहरे व्यक्तित्व लेकर जीते हैं। यहाँ हर व्यक्ति अपने दूसरे नाम का नकाब पहने हुए है। विशेषकर अभिनेता-अभिनेत्रियों में अपना सिक्का जमाने में पहले के नाम की अपेक्षा नये नाम में इंडस्ट्री की अनैतिक-नैतिकता को निभाने की छाप होती है- 'सीनः 75' के पात्र अली अमजद, हरीश राय, वीरेन्द्र और अल्लीमुल्लाह ऐसे पात्र हैं जो फिल्म इंडस्ट्री से जुड़ने के बाद अपने असली व्यक्तित्व को भूल बैठे। 'दिल एक सादा कागज़' का कालीचरण दिनेश ठाकुर मस्ताना हो जाता है, शारदा जाह्नवी हो जाती है। 'सीनः 75' का राममनोहर गफ्फार बन जाता है। अपने नाम का चोला बदलकर यहाँ आदमी पूरी तरह संवेदनहीन, अनैतिक, स्वार्थी और अमानवीय हो जाता है। 'सीनः 75' में राही जी ने ऐसे अधूरे लोगों के बारे में लिखा है-"हिन्दी फिल्मों की दुनिया आधे-अधूरे लोगों की दुनिया है। यहाँ दो मिलकर तीन नहीं बनते। ये दो के मिलने से एक बनता है। शंकर-जयकिशन, लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल, कल्याणजी-आनंदजी, सलीम-जावेद, सपन-जगदेव, फैज-सलीम, मजीद-नारवी-ग्रीस.... दो से एक बनने का पूरा सिलसिला है। हद तो यह है कि यदि एक को अपने में मिलाने के लिए दूसरा नहीं

मिला तो वह अपने इकहरेपन को मिटाने के लिए अपने नाम को दुहरा कर लेता है- श्यामजी धनश्याम जी।"[9] इस तरह के आधे-अधूरे लोग नयी फिल्म के नाम पर पब्लिक को बेवकूफ समझकर अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं। 'सीनः 75' उपन्यास में मझला प्रोड्यूसर रफ़्फ़न से कहता है- "सब्जजेक्ट कोई ऐसा निकालो कि पब्लिक साली एकदम से चूतिया बन जाये।"[10]

फिल्मों के ग्लेमर से आकर्षित होकर घर से भागे युवक-युवतियों को यहाँ आकर अपना व्यक्तित्व बेचना पड़ता है या उनका जीवन बर्बाद हो जाता है। हिम्मत जौनुपरी' के बम्बई आकर सारे स्वप्न टूट जाते हैं। 'दिल एक सादा कागज़' का रफ़्फ़न अपने उसूलों से समझौता कर निर्माता-निर्देशकों के इशारे पर कहानी लिखना शुरू कर देता है, क्योंकि- "घर का किराया देना एक अच्छी नज़्म लिखने से बड़ा काम है। बिजली का बिल भरना अच्छी कहानी लिखने से ज्यादा जरूरी है।"[11]

फिल्मों में जो लड़कियाँ हीरोइन बनने आती है। उनकी राह लड़कों की अपेक्षा आसान होती है, क्योंकि फिल्मी दुनिया में हीरोइनों का रास्ता प्रायः प्रोड्यूसरों, डारेक्टरों, हीरों आदि के बेडरूमों से होकर गुजरता है। यहाँ कैरियर बनाने के नाम पर उन्हें प्रोड्यूसर से लेकर हीरो तक सभी की यौन तृप्ति करनी पड़ती है और उसमें नयी लड़कियों की कैरियर के कारण किसी तरह की ना-नुकुर नहीं होती है। इतना ही नहीं जिनका सौन्दर्य उतार पर होता है या सेक्स लायक नहीं रह जाती, उन्हें पुरानी कहकर दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंकते हैं। राही जी ने अपने उपन्यासों में इस यथार्थ का चित्रण करते हुए लिखा है- "जो हीरोइन पुरानी हो जाती है। यह फिल्म इंडस्ट्री में खप नहीं पाती-पुरानी मतलब जिसका सौन्दर्य उतार पर हो, जो सेक्स लायक न रह गयी हो.....साली पुरानी भी हो गयी है यार!"[12]

राही जी के उपन्यास 'ओस की बूँद' की पात्र शहनाज के हीरोइन बनने के लिए घर से भागकर बम्बई जाने पर फिल्म इंडस्ट्रीज के लोग उसके साथ ऐसा ही व्यवहार करते हैं और अंततःउसे रखैल बनकर जीने को मजबूर होना पड़ता है।'दिल एक सादा काग़ज़' के एक प्रसंग में राही जी ने इस यथार्थ की ओर इशारा किया है-"बड़े हीरो ने अपने गिलास में विह्सकी उड़ेली और उस जवान छोटी हीरोइन की तरफ देखने लगा जिसे ब्रेक देने के लिए उसके भाई की फिल्म में काम करने के लिए तैयार हो गया था। छोटी हीरोइन बड़ी खूबसूरत थी। न होती तो मझले प्रोड्यूसर ने उसे अपनी बहन ही क्यों बनाया होता-बहन, यानी रखैल !"[13]

'सीनः 75' उपन्यास में डाइरेक्टर हरीशराय की रखैल के रूप में रह रही एक साइड हीरोइन का चित्रण करते हुए उपन्यसकार ने लिखा हैं- "पलंग पर पड़ी हुई नंगी लड़की ने सिगरेट जलायी। यह कोई नयी लड़की थी। हरीश कि किसी बननेवाली फिल्म की साइड हीरोइन। हरीश ने उसकी तरफ देखा। उसके नंगे बदन पर आँखें फेरी। गुजरी हुई रात का मज़ा ताजा हो गया। 'आव न डार्लिंग' 'नंगी लड़की बोली, जो जागने के बाद से न जाने कितनी बार हेमामालिनी बन चुकी थी।"[14]

फिल्मी दुनिया के संबंध स्वार्थ और धनप्राप्ति पर केन्द्रित हैं। यहाँ पैसे के लिए सबकुछ, बिकता है- ईमान, घर की इज्जत, आबरू, तक सब कुछ। पैसे, प्रसिद्धि और ऐशोआराम के लिए लोग फिल्मों की ओर आकर्षित होते हैं और फिर उसे पाने के लिए किसी हद तक गिर सकते हैं, नकली जिंदगी जी सकते है, रिश्तों की मर्यादा को ताक पर रख सकते हैं, आधुनिकता के नाम पर कँवारे बदन से सेक्स का प्रमाण-पत्र ले सकते हैं, तस्करों का साथ दे सकते हैं। प्रोड्यूसर को फिल्म में अपनी रखैल को ब्रेक देना, हीरो को लड़की सप्लाई कर खुश करना और तस्करी के काले पैसे को सफेद करना अनेक कार्य अपनी फिल्म के द्वारा करने पड़ते हैं- 'ये साले स्टार अपने आपको समझते क्या हैं! मझला प्रोड्यूसर बोला, 'छत्तीस परसेंट का पैसा उठाके सालों को रोकड़ दो और ऊपर से लड़की सप्लाई करो।"[15]

राही जी ने यह स्पष्ट संकेत दिया है कि फिल्म इंडस्ट्री से कालाधन और तस्करी का चोली-दामन का संबंध है। काले पैसों को सफेद करने का बहुत बड़ा व्यवसाय फिल्मों द्वारा किया जाता है। 'दिल एक सादा कागज' के एक सीन में राही जी ने इस संदर्भ में लिखा है- "सच्ची बात तो यह कि महेन्द्र जी तो एक हजार थामने के लायक भी नहीं थे; पर शारदा जिस स्मगलर की कीप थी वह शारदा को हीरोइन बनाने के साथ-साथ काले पैसे पर चूना फिरवाने की फ़िक्र में था। महेन्द्र जी तो पैड प्रोड्यूसर थे।"[16]

फिल्म इंडस्ट्री में लोग प्रायः उत्तेजक और द्विआर्थी संवादों या गीतों के जरिए कामयाबी का ख्वाब देखते हैं। और कुछ प्रतिभाहीन या नयी हीरोइनें सेक्स या बदन उघाडू बोल्ड दृश्यों द्वारा तहलका मचाकर अपने आप को स्थापित करना चाहती हैं। यहाँ आदमी कला से नहीं कार की लम्बाई से नापा जाता है।"[17]

फिल्म जगत् में रिश्ते धन और स्वार्थ पर आधारित होते हैं। यदि किसी को सफलता मिल जाती है तो उसके वर्गीय चरित्र में गिरावट आ जाती है। सीनः 75' के हरीशराय, 'दिल एक सादा कागज' के रफ्फन आदि पात्र इस यथार्थ

को चरितार्थ करते हैं- "बागी आज़मी का नाम नये सिक्के की तरह चल पड़ा देखते-देखते वह चम्बूर के एक सड़े हुए फ्लैट से पाली हिल पर आ गया। अपने फ्लैट में। उसके पास पन्द्रह फिल्में थीं। बम्बई के पुराने दोस्तों में से फज्जू खाँ बेताब मिरजापुरी के सिवा, सब को भूल गया।.. बडे-बड़े हीरो उसके गले में बाहें डालकर तस्वीर खिचवाने लगे। हीरोइन यह शिकायतें करने लगीं कि वह उनकी बर्थडे पार्टी में क्यों नहीं आया।"[18]

इसी तरह 'सीनः 75' उपन्यास का पात्र फिल्मी डारेक्टर बना हरीशराय तो इतना अमानवीय और संवेदनहीन हो जाता है कि उसके संघर्ष के दिनों का साथी और फिल्म का लेखक अली अमजद जब आत्महत्या कर लेता है तो वह फिल्म का प्रिमियम शो नहीं रुकवाता और बड़ी संवेदनहीनता पूर्वक सेविंग बनाते हुए उसके पोस्टमार्टम का आदेश देकर प्रिमियर शो में जाता है। और दूसरे दोस्त अली मुल्लाह के पूछने पर मुस्कराते हुए कहता है- "वह कल रात किसी वक्त मर गया। यह कहते-कहते वह एकदम से मुस्कुरादिया। 'क्योंकि एक फोटोग्राफर पास में खड़ी हेमामालिनी के साथ उसकी तस्वीर ले रहा था।"[19]

समग्रतः उक्त उपन्यासों में डॉ.राही मासूम रज़ा ने अपने युगीन साठोत्तर हिंदुस्तानी फिल्म जगत् की चमक-दमक के पार्श्व की विकृतियों को अपने अनुभूत यथार्थ के साथ अभिव्यक्त किया है। यह फिल्मी समाज नव धनाड्य वर्ग की उस विकसित भोंथरी चेतना का परिणाम है जहाँ पारम्परिक मूल्य और नैतिकताएँ पानी भरते हैं; जहाँ निर्माता-निर्देशक, लेखक, अभिनेता अभिनेत्री या दूसरे लोगों के आपसी संबंध या तो अर्थाधारित हैं या स्वार्थाधारित। स्वार्थपूर्ण आर्थिक सम्बन्ध यहाँ के लोगों को अमानवीय, असंवेदनशील, अनैतिक, कामुक और विलासी बना देते हैं। इसप्रकार डॉ. राही जी के उपन्यासों में हरीशराय, रमा, शारदा, राधिका, पुष्पा, शहजादा कश्मीरी, फंदा पटियालवी इत्यादि प्रतिनिधि पात्रों द्वारा मुंबई की फिल्मी दुनिया का युगीन यथार्थ अभिव्यक्त हुआ है।

सन्दर्भ :-

1.सं.डॉ. कुँवरपालसिह राही और उनका रचना-संसार, पृष्ठ संख्या 300
2.सं.डॉ. कुँवरपालसिह राही और उनका रचना-संसार, पृष्ठ संख्या 29
3. सं.डॉ.एम. फीरोज़ खान राही मासूम रज़ाःकृतित्व एवं उपलब्धियाँ, पृष्ठ संख्या 144
4. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 72
5. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 15, 16
6. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 43
7. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 96
8. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 16, 17
9. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 61
10. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 43
11. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 69
12. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 60
13. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 56
14. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 124
15. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 160
16. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 199
17. हिम्मत जौनपुरी, पृष्ठ संख्या 109
18. दिल एक सादा कागज, पृष्ठ संख्या 200, 201
19. सीनः 75, पृष्ठ संख्या 130